भारत में विज्ञान शिक्षा

डॉ. अमिताभ मुखर्जी

भारत में विज्ञान शिक्षा एक चुनौती है। अगर विज्ञान को जीवंत, कौतुहलपूर्ण और रोचक बनाकर पेश करें तो इससे न केवल विज्ञान शिक्षा के एक बड़े मकसद को पूरा करने में मदद मिलेगी, बल्कि अधिक से अधिक विद्यार्थी इसके अध्ययन के प्रति आकर्षित भी हो सकेंगे।

आज़ाद भारत में स्कूली विज्ञान शिक्षा की बात करने से पहले एक नज़र 1900-1947 के दौरान देश में विज्ञान की स्थिति और स्कूली शिक्षा पर डाल लेते हैं। इस दौरान राष्ट्रवाद उभार पर था। इसलिए विज्ञान सम्बंधी गतिविधियों का भी राष्ट्रवाद के रंग में रंगना स्वाभाविक था। रमन, साहा और बोस की वैज्ञानिक उपलब्धियां औपनिवेशिक शासकों को एक तरह से करारा जवाब थीं। उधर, दूसरी ओर, स्कूली शिक्षा ब्रिटिश शासन द्वारा स्थापित मॉडल पर आधारित थी। सभी बच्चों की स्कूलों तक पहुंच अब भी सपना ही था। गांधी और टैगोर ने शिक्षा के वैकल्पिक मॉडल पेश किए, लेकिन मुख्य धारा के लोगों ने उन्हें स्वीकार नहीं किया।

आज़ादी के साथ ही देश ने आर्थिक विकास के मॉडल को अपनाया जिसमें विज्ञान व प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका थी। नेहरू का सपना ऐसे आधुनिक और समृद्ध भारत का निर्माण करना था जो विज्ञान व प्रौद्योगिकी से चालित हो। ज़ाहिर था कि नेहरू के नए भारत में स्कूली विज्ञान शिक्षा को विशेष अहमियत मिली, लेकिन ऐसा व्यवस्थित ढंग से नहीं हो पाया।

नए भारत के विकास में वैज्ञानिकों की अहम भूमिका थी। इसलिए कोशिश थी कि अधिक से अधिक और बेहतर वैज्ञानिक बनाए जाएं। स्कूलों में विज्ञान की शिक्षा की दिशा तय करने में यह एक महत्वपूर्ण कारक बना।

यदि हम स्कूलों में विज्ञान शिक्षा के विकास क्रम पर नज़र दौड़ाएं तो साफ दिखता है कि हम पाठ्यक्रमों में अधिक से अधिक जानकारी शामिल करते आए हैं। यह जानकारी भी तथ्यात्मक सूचनाओं के रूप में अधिक रही है। प्रयोगों की संख्या कम होती गई है। किसी समय स्कूलों में विज्ञान के प्रयोग काफी आम थे, लेकिन अब ये प्रतिष्ठित व गिने-चुने स्कूलों तक ही सीमित होकर रह गए हैं। इस प्रकार किताबें तो ज्ञान से भरी हुई हैं, लेकिन उस ज्ञान को सहारा देने वाली वे प्रायोगिक गतिविधियां नहीं हैं जो विषय को रुचिकर व समग्र रूप में पेश कर सकें। ऐसे में विद्यार्थियों के पास तथ्यों को रटने के अलावा और कोई विकल्प नहीं होता। यही वजह है कि उन्हें विज्ञान न केवल कठिन लगता है, बल्कि नीरस भी। नतीजा यह निकलता है कि विद्यार्थी दसवीं के बाद विज्ञान को अलविदा कह देते हैं।

भारी भरकम पाठ्यक्रमों के पीछे तर्क दिया जाता है कि सूचनाओं के विस्फोट के इस युग में हमें भी तमाम सूचनाओं के लिए पाठ्यक्रमों के द्वार खुले रखने होंगे, उन्हें लगातार अपडेट करते रहना होगा। अगर हम ऐसा नहीं करेंगे तो पश्चिमी देशों से पिछड़ जाएंगे। इस प्रवृत्ति में बदलाव के प्रयासों को यह कहकर नकार दिया जाता है कि इससे हमारी प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता प्रभावित होगी। पश्चिम में आईआईटी स्नातकों की सफलता का श्रेय विज्ञान शिक्षा के इसी मॉडल को दिया जाता है। लेकिन सच तो यह है कि महज तोता रटंत विज्ञान शिक्षा का कोई अर्थ नहीं है। विज्ञान का मूल आधार यही है कि इसे सदैव खुला और गतिशील होना चाहिए, लेकिन वर्तमान में जो विज्ञान शिक्षा दी जा रही है, उसमें महज सूचनाओं का अंबार है।

भारत में विज्ञान शिक्षा की प्रचलित रूढ़िवादी परम्परा को चुनौती देने के प्रयास न के बराबर हुए हैं। हां, इसमें एक अपवाद है 'होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम'

(हो.वि.शि.का.)। यह माध्यमिक स्कूलों में प्रयोगों के माध्यम से विज्ञान के अध्यापन का कार्यक्रम था। इसे वर्ष 1972 में मध्यप्रदेश के होशंगाबाद ज़िले के 16 स्कूलों में एक पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर शुरू किया गया था। वर्ष 2002 में इसे अचानक बंद कर दिया गया। उस समय यह प्रदेश के 14 जिलों के करीब 1,000 स्कूलों में चल रहा था। हो.वि.शि.का. इस मायने में अद्वितीय था कि यह सामान्य स्कूलों में संचालित राज्य सरकार का कार्यक्रम था जिसे एक बड़े अकादमिक स्रोत समूह का समर्थन हासिल था। शिक्षा के संदर्भ में इसका व्यापक असर दिखता है।

हो.वि.शि.का. और परम्परागत विज्ञान शिक्षण में एक बड़ा अंतर यह था कि जहां हो.वि.शि.का. विज्ञान की प्रक्रिया यानी अवलोकन, रिकार्डिंग, प्रयोग इत्यादि पर ज़ोर देता है, वहीं परम्परागत विज्ञान शिक्षण का ज़ोर विज्ञान के उत्पाद यानी नियमों, सिद्धांतों पर रहता है। कई मायनों में यह विवाद आज भी जारी है कि विज्ञान का अध्ययन प्रक्रिया का अध्ययन होना चाहिए या और उसके उत्पाद का। मुख्य धारा के लोग उत्पाद के शिक्षण के ही समर्थन में हैं।

मध्यप्रदेश सरकार द्वारा हो.वि.शि.का. को बंद करना भारत में स्कूली शिक्षा का एक दुखद अध्याय है। फैसले पर पुनर्विचार करने की देश भर के शिक्षाविदों की अपील से भी सरकार के कानों पर जूं नहीं रेंगी। यह उन लोगों की जीत थी जो शिक्षा में बदलावों के विरोधी थे और किसी भी प्रकार से यथास्थिति बनाए रखना चाहते थे।

पिछले दो दशक में हर बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा का अवसर मुहैया करवाना राष्ट्रीय लक्ष्य बन चुका है। देश के प्रत्येक बच्चे को आठवीं कक्षा तक शिक्षा की बात कभी असंभव माना जाती थी लेकिन आज यह संभव नज़र आ रही है। इसलिए अब यह सवाल पूछा जाना जायज़ ही है कि आखिर स्कूलों में विज्ञान की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य क्या है? पिछले 40 साल से जो पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तकें प्रचलन में हैं, उनसे तो यही लगता है कि उनका अघोषित लक्ष्य वैज्ञानिक पैदा करना है। इसलिए प्रारंभिक कक्षाओं में ही अधिक से अधिक जानकारी देने का दबाव लगातार बना रहा है। यही वजह है कि पाठ्यक्रमों में विज्ञान की नानाविध शाखाएं मिल जाएंगी।

अगर कक्षा दसवीं तक के बच्चों के लिए एक विषय के रूप में विज्ञान पढ़ना अनिवार्य है, तो फिर विज्ञान शिक्षा का प्रारंभिक लक्ष्य महज वैज्ञानिक पैदा करना नहीं हो सकता।

युनेस्को ने सभी के लिए विज्ञान एवं टेक्नॉलॉजी साक्षरता का लक्ष्य तय किया है। इसके तहत कोशिश यह है कि हर नागरिक विज्ञान की मौजूदा प्रवृत्तियों से अवगत हो, दैनिक कार्यों में इस्तेमाल होने वाली प्रौद्योगिकी को समझकर उसका इस्तेमाल कर सके और उसके पास सामाजिक महत्व के विज्ञान सम्बंधी मुद्दों (जैसे किसी बांध की ऊंचाई, कोई परमाणु संयंत्र कहां स्थित होना चाहिए इत्यादि) की जानकारी हो। जाहिर है कि अगर प्रारंभिक लक्ष्य वैज्ञानिक साक्षरता है तो कक्षा दसवीं तक के पाठ्यक्रम में क्रांतिकारी बदलाव करने की ज़रूरत होगी।

विज्ञान से जुड़े शिक्षाविद् और नीति निर्धारक स्कूली विज्ञान शिक्षा के प्रति चिंता जताते रहे हैं और इसीलिए कई नई योजनाएं शुरू की गई हैं। इस चिंता की वजह भी साफ है: देश के विज्ञान संस्थानों में वैज्ञानिकों व योग्य कर्मचारियों का अभाव। हम न तो योग्य और न ही पर्याप्त संख्या में युवा वैज्ञानिक तैयार कर पा रहे हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो स्कूली शिक्षा ऐसा करने में विफल रही है जबकि उसका मुख्य (अघोषित) लक्ष्य ही वैज्ञानिकों का निर्माण करना रहा है।

एनसीईआरटी ने अपने राष्ट्रीय पाठ्यक्रम दस्तावेज़ - 2005 में नए सिरे से इस समस्या के समाधान का प्रयास किया है। स्कूली विज्ञान शिक्षा में 'विज्ञान एक उत्पाद है' की धारणा को गैर ज़रूरी समझकर हो.वि.शि.का. और अन्य संस्थाओं के प्रयासों को नीतिगत दस्तावेज़ों में अहम स्थान दिया गया है। पाठ्यक्रम को तथ्यों व जानकारियों के अनावश्यक बोझ से मुक्त करना, विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में विभाजन को खत्म करना और स्कूली शिक्षा में दैनंदिन इस्तेमाल की बाहरी जानकारियों का समावेश

करना इस मसौदा दस्तावेज़ का प्रमुख लक्ष्य है।

ये प्रयास निश्चित रूप से स्वागत योग्य हैं, लेकिन ये काफी नहीं हैं। हमें यह स्वीकार करने में गुरेज नहीं करना चाहिए कि विज्ञान शिक्षा का मौजूदा मॉडल विफल हो गया है। इसलिए विज्ञान शिक्षा के एक नए मॉडल के विकास का समय आ चुका है। यह नया मॉडल ऐसा हो जिसमें बच्चों के लिए विज्ञान कोई अनजाना शब्द न हो, बल्कि वे उसे अपने ही अनुभवों में महसूस कर सकें। इसके लिए पाठ्यक्रम में विज्ञान की प्रक्रियाओं को विशेष महत्व देना होगा और बच्चों को ऐसे मौके मुहैया करवाने होंगे कि वे खुद ही प्रयोग करके चीज़ों को सीख सकें।

तो कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि विज्ञान को इतना जीवंत और रोचक होना चाहिए कि विद्यार्थी उसके अध्ययन के प्रति आकर्षित हों। विज्ञान का यह मॉडल देश में विज्ञान शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों को पूरा करने में मददगार साबित हो सकेगा। ***(स्रोत फीचर्स)***